मीडिया समग्र सच का आईना नहीं है

मीडिया विमर्श के दौरान एक स्वर यह भी उभरता है कि मीडिया तो आईना है, वह जो बताता है समय का सच बताता है। कुछ पक्षधर यह भी कहते हैं कि मीडिया से ही सकारात्मक होने या नैतिक मूल्यों के आधार पर चलने का आग्रह कुछ ज्यादा ही किया जाता है। जब समाज में ही मूल्य नहीं बचे हैं या व्यक्ति सकारात्मक नहीं है, तब मीडिया से ऐसी अपेक्षा क्यों? समाज, व्यक्ति या इन संस्थाओं में सकारात्मकता आयेगी तो मीडिया भी सकारात्मक होगा क्योंकि मीडिया समाज का ही उत्पाद है।

कभी साहित्य को भी समाज का दर्पण कहा जाता था। अब यह मुहावरा मीडिया पर चस्पा हो गया है। कहने में, ऊपरी सतह पर, यह ठीक भी लगता है। समाज में अपराध, भष्टाचार, अनीतिपूर्ण व्यवहार, हिंसा, द्वेष, व्यभिचार है। पर क्या एक घटना से समाज को पहचाना जाता है। यदि यही पैमाना है, तो फिर वह घटनाएं और प्रसंग कहां है जिसमें नीति, सदाचार, प्रेम, भाईचारा, सहयोग आदि प्रदर्शित होता है। समाज में अब भी मूल्यहीन व्यक्ति को सामाजिक स्तर पर आदर्श नहीं माना जाता। हां, अपनी बुराई छिपाकर अपनी उज्ज्वल छवि के सहारे ही वह लोगों के दिलों में अपनी जगह बनाता है। तब क्या सचमुच ही मीडिया इन उभयपक्षों या उस छिपे काले हिस्से को, श्वेत के साथ, एक साथ उपस्थित करता है। जाने क्यों और कब से यह सोच है कि व्यक्ति केवल नकारात्मकता, सनसनी, अपराध, हिंसा या व्यभिचार के संबंध में जानने को उत्सुक होता है। यह सच नहीं है। यह सच कभी रहा भी नहीं। कोई भी आईना कभी भी समग्र सच को उपस्थित नहीं कर पाया। आईना एक देशीय, एक पार्श्व को ही उपस्थित कर पाता है। यही उसकी सीमा है। हम जब मीडिया को आईना का मुहावरा देते हैं, तब उसका अर्थ यह क्यों करना चाहिए कि वह जो है, उसे समग्र ही प्रस्तुत करता है। हमें कहना यह चाहिए कि यह एक खंड है, हिस्सा है जो प्रस्तुत है। अप्रस्तुत ऐसा भी हो सकता है या अन्यथा भी होना संभव है। कश्मीर, पूर्वोत्तर या अन्य उभरते राज्यों में व्यक्ति तथा समाज के व्यवहार का जिन्हें अनुभव है, वे जानते हैं कि मीडिया का सच वहां के लोगों के व्यवहार या नीयत के संबंध में पूरा सच नहीं बताता है। यदि ऐसा होता तो ये सभी राज्य वीरान या श्मशान ही तरह हो गए होते।

एक चश्मदीद ने श्रीनगर के लालचौक की एक हिंसक घटना के लगभग पंद्रह मिनट बाद लोंगों को फिर से सामान्य व्यवहार करते देखा है। एक मीडिया से जुड़ा परिवार श्रीनगर के उस हिस्से में गया, जो पुराने श्रीनगर के नाम से जाना जाता है और कहा जाता है ज्यादातर अतिवादी वहीं पाए जाते हैं। परिवार के साथ गए इस व्यक्ति के पूरे चार घंटे, वह भी शाम के, सुखद और सुकूनभरे रहे। हां, अचरज दोनों तरफ की आंखों में था, पर थे तो वे भी सामान्य लोग ही। यह, और ऐसे मीडिया में सच कहां आ पाते हैं, जो लोगों को मनुष्यता का यह चेहरा भी बताएं और कहें कि लोग अब भी वैसे ही हैं। कुछ लोग जरुर अपने राजनीतिक या अपराध की मंशा के लिए अर्ध सत्य या असत्य उपस्थित करते हैं। ठीक वैसी ही अन्य सामान्य शहरों में भी होती है। इसलिए सच का आईना नहीं है मीडिया। समग्र वस्तुस्थिति का एक खंड है। इसलिए तो संचार की भाषा में कैमरे के दृश्य की व्याख्या करते हुए कहा जाता है कि वह चयनित दृश्य या दृष्टिकोण को, सिलेक्टिव

परसेप्शन को प्रस्तुत करता है। ठीक उसी तरह जैसे आप आईने में अपना चुना हुआ अक्स ही देखते और दुरुस्त करते हैं। मीडिया में भी प्रस्तुतकर्ता अपने दृष्टिकोण के अनुरूप दृश्य को या सूचना को छांटता, बताता और प्रस्तुत करना है। वह कहां समग्र सच उपस्थित करता है।

इन संदर्भों में नोएडा के आरुषि हत्याकांड के संबंध में मीडिया की प्रस्तुति को देख लें। मीडिया का सच लगभग रोज ही तलवार, आरुषि या अन्य के संबंध में एक नया सच, जो पहले सच को झूठ में बदलता रहा, को प्रस्तुत करता रहा। मीडिया का सच राजस्थान के आंदोलन की वह तस्वीरें तो पेश करता रहा, जो आंदोलन को पौरुष में बदलती थीं, पर उस सबसे पीड़ित और वह सब कुछ जो अपने राजनीतिक हितों की आड़ में छिपा रहा, उसे कहां बता पाया। लगभग हर दिन ही ऐसे प्रसंग घटते हैं जो इस तथ्य को अधिक मजबूत करते हैं कि मीडिया का सच, पूरा नहीं है और न ही उसकी प्रस्तुति में 'संजय-सच' व्यक्त होता है। वह समय के सच को समग्र रूपसे बता पाने में असमर्थ है। आरुषि प्रकरण को लेकर किए गए सर्वेक्षण में लोगों की प्रतिक्रियाएं इसी सच को बहुत स्पष्टता से व्यक्त करती हैं।

****